टेराकोटा में कार्य करने वाले समकालीन मूर्ति शिल्पियों का समीक्षात्मक अध्ययन

डॉ0 भीमराव आंबेडकर विश्वविद्यालय, आगरा

की चित्रकला विषय की पीएच0डी0 उपाधि

हेतु प्रस्तावित शोध प्रबन्ध की

'संशोधित रूपरेखा'

सन् 2017

निर्देशिका

डॉ0 इन्दु जोशी चौधरी

अध्यक्ष,

चित्रकला विभाग,

आगरा कॉलेज, आगरा

शोधार्थी

जितेन्द्र कुमार

(रजि0नं.– 354/2017 5744)

हस्ताक्षर .....

चित्रकला विभाग

आगरा कॉलेज, आगरा

प्रमाण पत्र

(संशोधित)

प्रमाणित किया जाता है कि प्रस्तुत संशोधित रूपरेखा **''टेराकोटा में कार्य करने वाले समकालीन मूर्ति शिल्पियों का समीक्षात्मक अध्ययन''** के शोधकार्य हेतु शोधार्थी **जितेन्द्र कुमार चौधरी** द्वारा ललित कला विभाग, आगरा कॉलेज, आगरा से पीएच0डी0 (चित्रकला) के कार्य पूर्ति हेतु प्रस्तुत किया गया है। यह संशोधित रूपरेखा शोधार्थी द्वारा स्वयं मेरे निर्देशन तथा निरीक्षण में इस संस्थान में रहकर तैयार की गयी है।

मैं इस संशोधित रूपरेखा को पीएच0डी0 के शोध प्रबन्ध के लिए प्रस्तुत करने की अनुमति प्रदान करती हूँ ।

(रजि0नं.– 354 / 2017 5744)

दिनांक :

निर्देशिका

डॉ0 इन्दु जोशी

(अध्यक्ष)

ललित कला विभाग,

हस्ताक्षर .....

आगरा कॉलेज, आगरा

हस्ताक्षर .....

टेराकोटा में कार्य करने वाले समकालीन मूर्ति शिल्पियों का समीक्षात्मक अध्ययन

<u>रूपरेखा</u>

क्र0सं0		**पृ0सं0**
1.	परिचय	1—3
2.	साहित्य समीक्षा	3—11
3.	उद्देश्य	11—12
4.	परिकल्पना	12
5.	शोध पद्धति	13—14
6.	अध्ययन के क्षेत्र एवं महत्व	14
7.	अनुक्रमणिका	15
8.	त्थ्त्म्छब्	16
9.	ठप्ठस्प्व्ळत ।च्भ्ल	17—25

हस्ताक्षर ....

टेराकोटा में कार्य करने वाले समकालीन मूर्ति शिल्पियों का समीक्षात्मक अध्ययन

परिचय

कला एवं संस्कृति मानव जीवन का एक महत्वपूर्ण अंग है। प्रागैतिहासिक काल से ही मानव ने अपने आस–पास के वातावरण से प्रभावित एवं प्रेरित होकर अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करने के लिए अनेकों माध्यम खोजा, जिनमें पत्थर, मिट्टी, कालिख, गेरू, खड़िया आदि प्रमुख है। मानव धीरे–धीरे सभ्यता के विकास के साथ नवीन अविष्कार करते हुए कला सृजन की नवीन परम्पराओं को निरन्तर सृजित करता रहा है।

कला मनुष्य के रचनात्मक कौशल की भावनात्मक अभिव्यक्ति है। जिसके कई रूप हमें आज देखने को मिलते है। यदि सभ्यता के प्रारम्भ की बात करे तो पाषाण युग में जब मनुष्य का ज्ञान परिमार्जित नही था, तब भी वह अपनी आवश्यकतानुसार बनाये जाने वाले औजारों के माध्यम से अपने कलात्मक कौशल को प्रकट करता था।[1] पाषाण युग से वर्तमान युग तक की कला यात्रा में भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति, विकास के कई चरणों को पार करती हुई कलात्मक अभिव्यक्ति की विरासत को निरन्तर नवीन रूप में आगे बढ़ाती रही है। जिसकी छाप उसके समाज एवं संस्कृति से स्पष्ट झलकती है।

''विश्व इतिहास में भारतीय संस्कृति का वही स्थान एवं महत्व है जो असंख्य द्वीपों के सम्मुख सूर्य का है।'' भारतीय कला एवं संस्कृति अन्य संस्कृतियों एवं कलाओं सें सर्वथा भिन्न तथा अनूठी है, इसलिए रेडफिल्ड ने कहा है कि ''संस्कृति, कला और वास्तुकला में स्पष्ट होने वाले परम्परागत ज्ञान का वह संगठित रूप है, जो परम्परा के द्वारा संरक्षित होकर मानव समूह की विशेषता बन जाती है।''[2]

भारतीय कला एवं संस्कृति की सबसे प्राचीन एवं विशिष्ट विशेषता है– लोक कला। लोक कलायें कई स्वरूपों में आज भी हमारे समाज का अभिन्न अंग बन क्रियाशील रूप में गतिमान है जैसे– गोधन, माण्डना, चौक पूरना, मृण्मय, टेराकोटा आदि। यह लोक कलायें केवल कलात्मक वस्तु नही है वरन् हमारे दैनिक

क्रियाकलापों, व्रत, तीज–त्यौहार आदि में जीवन की आत्मा के रूप में समाविष्ट है। इन कलाओं में सर्वप्रमुख कला है टेराकोटा (मृण्मय) कला।[3]

टेराकोटा का शाब्दिक अर्थ है– आग में पकी मिट्टी। व्यवहारिक परिप्रेक्ष्य में इस शब्द का अर्थ– पकी मिट्टी से बना बर्तन है। टेराकोटा की श्रेणी में आग में पकाये गये मिट्टी के समस्त छिद्रयुक्त बर्तन व वस्तुएं शामिल है। यह क्रिया एक विशिष्ट प्रक्रिया के माध्यम से पूर्ण की जाती है, जो आग में पक जाने के बाद प्राकृतिक भूरे–नारंगी रंग की हो जाती है या उन्हे बाद में रंगा जाता है।[4] जबकि मृण्मय बर्तन पीली मिट्टी से बनाकर पकाये जाते है। जो दैनिक उपयोग में लाये जाते है जैसे– कुल्हड़, मटका, गुल्लक, सुराही, कासा आदि।

टेराकोटा मृण्मय कला परम्परा के आरम्भ का इतिहास, जिसकी एक क्रमिक विकास श्रृंखला है आज भी जीवन्त है। इनपर किये गये अलंकारिक सजावटी अंकन एवं आकार इसके सौन्दर्य पक्ष को द्विगणित करते है। बौद्ध काल में इस कला ने सर्वाधिक उन्नति की है। टेराकोटा की अपनी विशिष्टता ने समकालीन मूर्ति शिल्पियों भी इस ओर आकर्षित होते रहे है। वर्तमान में कई ऐसे मूर्ति शिल्पि है जो मिट्टी से मूर्तिशिल्प का निर्माण कर रहे है और इस परम्परागत कला को एक नया आयाम दे रहे है और इसे समकालीन टेराकोटा कला के रूप में विश्व स्तर पर पहचान दिला रहे है। टेराकोटा मूर्तिशिल्प कला अपनी विशेषताओं और सौन्दर्य के कारण विश्वस्तर पर कला प्रेमियों में आकर्षण का केन्द्र बना हुआ है।

मृण्मय कला की बात करे तो टेराकोटा मूर्तिशिल्प एक महत्वपूर्ण कला है जो आधुनिकता के रूप में सृजन हो रहे है और अपने नये प्रयोगों और नवीन विषयों के सृजनशीलता की सफलता के साथ विकास प्राप्त कर रहा है। वर्तमान में अनेक समकालीन मूर्ति शिल्पी है जिसके सानिध्य में टेराकोटा कला निरन्तर क्रियाशील है। इन प्रमुख रूप से हिम्मत शाह जी, रजत घोष जी, देवीलाल पाटीदार आदि कलाकार बड़ी सजगता के साथ कार्य कर रहे है।

ये मूर्ति शिल्पी अपने विचारधारणा और समाज को एक नये स्वरूप में दिखाने हेतु विशिष्ट विषयों पर आधारित मूर्तिशिल्प का सृजन करते है जैसे– हिम्मत शाह के हेड, रजत घोष की पौराणिक और यर्थाथवाद व मुदिता भंडारी के

कंक्रीट के जगलों के विषयों तथा अन्य मूर्ति शिल्पियों के पिरामिड, लाइफस्केप, ग्राम देवता आदि बहुत ही लोक प्रिय है।

ये मूर्ति शिल्पी अपने कार्य में पूर्ण दक्ष है। जो परम्परागत माध्यम से समकालीन विषयों व कलात्मक आकृतियों का सृजन कर रहे है। इन कलाकारों की अपनी–अपनी शैली है, जिससे इनकी शैलीगत पहचान होती है। वस्तुतः ये मूर्ति शिल्पकार बहुमुखी प्रतिभा के धनी है। इनकी सृजनशीलता से टेराकोटा कला विश्व की कलाओं में उच्च शिखर पर आसीन है, परन्तु वर्तमान में यह कला सामाजिक उपेक्षाओं से क्षीण हो रही है। अतः इनके प्रोत्साहन और विकास के लिए टेराकोटा मूर्तिशिल्प कला के ज्ञान को जन–जन तक पहुँचाने की आवश्यकता है।

इसी कारण समकालीन मूर्ति शिल्पियों एवं इनके विविध कलात्मक मूर्तिशिल्पों से मैं भी प्रभावित हुआ। जिसने मुझे इन समकालीन टेराकोटा मूर्ति शिल्पियों के विषय में गहन रूप से जानने व समझने के लिए प्रेरित किया। इसी जिज्ञासा के फलस्वरूप मैंने टेराकोटा में कार्य करने वाले समकालीन मूर्ति शिल्पियों को अपने शोध का विषय बनाया। इस शोध के द्वारा समकालीन टेराकोटा मूर्ति शिल्पियों व उनकी संसार के समक्ष इस कला को प्रत्यक्ष रखने के लिए, मैंने अपने शोध का विषय, **''टेराकोटा में कार्य करने वाले समकालीन मूर्ति शिल्पियों का समीक्षात्मक अध्ययन''** के रूप में चयन किया।

साहित्य समीक्षा

त्रिपाठी, अनुराधा, 2012 ने अपने शोध प्रबन्ध ***''गोरखपुर एवं वाराणसी के मृण्मय कला में निहित अंलकारिक पक्ष का तुलनात्मक अध्ययन''*** में इनकी भौगोलिक एवं ऐतिहासिक स्वरूप को स्पष्ट किये। सांस्कृतिक व सामाजिक स्वरूप का भी अध्ययन हुआ। टेराकोटा के अंलकारिक तत्वों, माध्यम का विश्लेषण किया गया। समाज पर पड़ने वाले प्रभाव का मूल्यांकन भी किया गया।

इससे ज्ञात होता है कि आदिमानव जो कुछ भी रचित करता था, उसमें उनका अपना उद्देश्य होता था। उनके द्वारा रचित आकारों के पीछे उनका भावनात्मक लगाव होता था। क्रमिक विकास के स्वरूप यह सभ्य होते गये और उपयोगी कलाओं जैसे बर्तन, औजार, गहने, खिलौने, इत्यादि का निर्माण भी प्रारम्भ हो गया।

वर्तमान में यह कलाकार प्लास्टिकरण के विकास से परम्परागत कलात्मक गुणों के ह्रास से दुखी है; किन्तु गोरखपुर का टेराकोटा और आजमगढ़ की काले पात्र प्लास्टिक की मार से बचे हुये है। इन कलाकृतियों की अपनी एक अलग सौन्दर्यात्मक पहचान है। जिसका स्थान अभी प्लास्टिक नहीं ले सकी है।

यह सत्य है कि आधुनिक कला अपने कलात्मक पक्ष के साथ–साथ उपयोगी पक्ष को भी साथ लेकर चलती है। सामान्य तौर पर यह देखा गया है कि भारतीय जनमानस कला को अपने जीवन का एक अंश मानकर चला है। वह कला का विकास और निर्माण नही करता बल्कि कला को जीता है।

संभावनाओं को देखते हुए कहत है कि टेराकोटा कला का निरन्तर विकास कर रहा है। इसके अंलकारिक व कलात्मक सौन्दर्य को बढ़ाया जा रहा है। गोरखपुर टेराकोटा कला की कलात्मक और सौन्दर्यात्मक तत्वों को वर्तमान धारा के सन्दर्भ में विश्लेषित किया जाये तो और भी नये तत्वों को उजागर किया जा सकता है।

रतन, 2007–08 ने अपने शोध प्रबन्ध ***"पॉटरी एवं सेरेमिक कला की सांस्कृतिमूलक भूमिका एक समीक्षात्मक अध्ययन (उत्तर प्रदेश के विशेष सन्दर्भ में)"*** में पॉटरी और सेरेमिक कला का समीक्षात्मक अध्ययन किया गया है। इसमें पॉटरी और सेरेमिक कला के संरचनात्मक इतिहास, संस्कृति परम्परा, समकालीन साम्यता और भेदत्व को बताने का पूर्ण प्रयास किया है। इस कला की उपयोगिता, सार्थकता, निर्मिति और प्रकृति प्रियता की दृष्टि से उत्कृष्ट वर्णन किया है। इसमें इस कला की आधुनिक तकनीक, वैज्ञानिक आधारभूत व परम्परागत पद्धति तथा इनके कलाकारों की भी व्याख्या की गयी है।

पॉटरी और सेरेमिक कला दोनों ही मानव जीवन से जुड़ी हुई है, जो लोगों के रहन सहन में शामिल है। मानव अपनी अभिव्यक्ति पॉटरी और सेरेमिक कलाओं के माध्यम से व्यक्त करती है। अपने सन्देश जनमानव तक पहुँचाती है। यह कला वर्तमान में अत्यधिक प्रचलन में है। विकासक्रम के अनुरूप पॉटरी और सेरेमिक कला में बहुत रचनात्मकता आयी है और संशोधन भी हुआ हैं। भारत के कई ऐसे स्थान है जो इन कलाओं के लिए ही प्रसिद्ध है, किन्तु जनमानस का सहयोग न मिलने से

यह कला अपने जीवन के लिए संघर्ष कर रही है। अतः इन सभी का अध्ययन करने की आवश्यकता है।

वर्मा, विमल, 2003 ने अपने शोध ग्रन्थ ***"मथुरा संग्रहालय में संग्रहीत मृण्मय मूर्तिकला का विश्लेषणात्मक अध्ययन"*** में मथुरा संग्रहालय के मृण्मय मूर्तिकला का क्षेत्रागत व विषयागत अध्ययन किया है। इसके कलात्मक एवं शैलीगत विशेषताओं का विश्लेषणात्मक विवेचन करने का पूर्ण प्रयास किया है। संग्रहालय के कालक्रमानुसार व अन्य संग्रहालयों के मृण्मय मूर्तिकला के साथ तुलना कर इसकी स्पष्ट विवेचना करने का अथक प्रयास किया है।

इससे ज्ञात होता है कि भारत की टेराकोटा कला जहाँ अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ रही है वही इसके कलाकार इसे अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों की मांग पर व्यवसायिक रूप में आगे बढ़ रहे है। इसके अत्यधिक निर्यात का परिणाम यह हो रहा है कि यह परम्परागत मृण्आकृतियाँ अपने मूल लोक तत्वों से दूर होती चली जा रही है। कुम्हारों में व्यवसायिक वृत्ति पहले की अपेक्षा आज अधिक प्रबल हुई है। इस व्यवसायिक रूचि की प्रबलता के कारण भी लोक तत्वों का अधिक ह्रास हुआ है।

एक व्यवसायिक प्रश्न यह है कि सामाजिक और आर्थिक क्षेत्र में हो रहे परिर्वतनों का परम्परागत संस्कृति एवं परम्परागत लोक कलाओं पर कितना प्रभाव पड़ता है। इसके सन्दर्भ में सर्वप्रथम हमें प्रभावों से परम्परागत संस्कृति और कला की रक्षा करनी चाहिए। उनके संरक्षण व रख–रखाव आदि को भी प्रोत्साहित करने को कहा गया है।

सिंह, ज्योत्सना, 2002 ने अपने शोध प्रबन्ध ***"अलीगढ़ की लोक कला एक समीक्षात्मक अध्ययन"*** में अलीगढ़ के लोक कलाओं का वर्णन करती है। इसमें टेराकोटा लोक कला का भी वर्णन किया गया है। इन लोक कलाओं में लोक मानस की भावनाओं व भावनुभूतियाँ को प्रकाशित किया है। इनका समाज में उपादेयता को भी बताने का प्रयास किया है।

ज्योत्सना कहती है कि मिट्टी की लोककला ब्रज संस्कृति के आरम्भ से ही मानी जाती है जो सदैव उत्कृष्ट रही है। मिट्टी से वस्तुओं का निर्माण मात्र ही नही होता वरन् आज भी ये सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक किसी भी रूप में इनकी

प्रतिष्ठा में चार चाँद लगाते है। मिट्टी की कला के प्रति रूचि जागृत करना सुकार्य है किन्तु नवीन संस्कृति, सहज सुलभ और सरल लोककला की उपेक्षा करती रहती है जो अनुचित है।

आज भी मिट्टी की लोककला को समाज और लोकमानस के संरक्षण पाने की आवश्यकता है। इन कलाओं के प्रति होने वाली उपेक्षाओं को दूर किया जाना चाहिए।

शर्मा, वन्दना, 1996, ने शोध ग्रन्थ ***"प0 बंगाल के मृण्मय मन्दिर (वीरभूम, बाकुड़ाँ)"*** में मृण्मय मन्दिरों और मूर्तियों की व्याख्या की गयी है। इसमें विशेषकर पश्चिम बंगाल के वीरभूम एवं बाकुड़ाँ की मृण्मय मन्दिरों का उल्लेख करती है। इनका अन्य मृण्मय मन्दिरों के साथ तुलनात्मक अध्ययन करते हुए इनकी महत्वता को दर्शाया है।

देश में कुछ कलाकार ऐसे भी है जो इन मन्दिरों से प्रेरणा लेकर मिट्टी के द्वारा मूर्तियाँ तथा म्यूरल का निर्माण कर रहे है। हस्त उद्योगों में इन कलात्मक मन्दिरों का कितनी उपयोगिता तथा महत्व है इसे आज के व्यापारीकरण से जाना जा सकता है कि किस प्रकार इन मूल म्यूरलो से ही छापे तैयार करने का कार्य कर रहे है। यह प्रक्रिया इन मन्दिरों के लिए खतरा बनती जा रही है।

अतः यह मानव समुदाय के ऊपर है कि इन्हें संरक्षण दें, ग्रहण करें, प्रशंसा करें, इसे मान्यता दे, इसका प्रचार–प्रसार करें। जिससे नयी पीढ़ी को इनके महत्व को समझने में सहयोग मिले।

धन प्रजापति, विजय कुमार, 2012 ने अपने लघु शोध प्रबन्ध ***"औरंगाबाद की पारम्परिक शिल्पकला"*** में औरंगाबाद के कला को समाज के सामने लाने का प्रयास किया। उनके अंलकारिक पक्ष का अध्ययन किया। उन्होनें इसके अध्ययन में पाया कि शिल्पियों द्वारा बनायी गयी शिल्प लालित्य प्राप्त है। हाथी की शिल्प अपनी उत्कृष्टता का द्योतक है, साथ ही घोड़ा शिल्प जिसका धार्मिक महत्व भी है। अपने शिल्प का बाजारीकरण और व्यवसायिकरण के साथ आस–पास के ग्रामों और वहाँ के समाज को भी ध्यान में रखकर शिल्प का निर्माण करते है जैसे दीये, कलश आदि। वैसे भी मिट्टी से बने पात्र व शिल्प पर्यावरण व वातावरण के लिए उपयुक्त है।

समाज में औरंगाबाद की पारम्परिक टेराकोटा कला की किस प्रकार से उपयोगी हो सकती है। इस कला से भारतीय कला की सौन्दर्य को बढ़ाया जा सकता है। कैसे शिल्पकला पर्यावरण में योगदान दे सकती है आदि दिशा निर्देश प्रदान किया।

नकवी, हेना, 2015 ने अपने लेख *"अनूठा पारम्परिक हस्तशिल्प"* में गोरखपुर टेराकोटा कला की उनकी विविधता और कलात्मक पक्ष का वर्णन किया है। इस कला के सृजन प्रक्रिया के रूप को प्रदर्शित किया है और वर्तमान में इसके स्वरूप और व्यवस्था का अध्ययन किया है।

गोरखपुर की टेराकोटा अपनी विविधता, परम्परा, रचनात्मकता और अभिनव प्रयोग टेराकोटा कला को नया जीवन प्रदान करती है। टेराकोटा एक ऐसा कुटीर उद्योग है, शिल्पी की कला का ही महत्व है। इसमें लागत कम है, लेकिन शारीरिक श्रम अधिक है। कलाकारों ने अपनी मेहनत, सृजनशीलता और लगन से आज तक इस कला को आधुनिकता के थपेड़ों से बचाकर जीवन्त रखा है। कलाकारों ने आस लगा रखी है कि उनके बच्चें इस विरासत को अच्छे ढंग से संभालेगें।

इस कला पर ध्यान दिया जाये तो आधुनिक तकनीक और कौशल के सामंजस्य से यह कला हजारों लोगों को रोजगार के साधन प्रदान कर सकती है। इसके लिए विकास योजना और अन्य केन्द्रिय योजनाओं का लाभ इन मिट्टी के कारीगरों तक पहुँचानें की आवश्यकता है जिसके द्वारा टेराकोटा का यह शिल्प हमारी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत का संदेशवाहक बनकर पूरे विश्व में फैल सकें।

मिश्र, हेमलता, 2011 ने *"मृण्मय पौष (माटी का अभिनव संसार)"* में लिखते है कि मध्य प्रदेश की सांस्कृतिक राजधानी भोपाल के रवीन्द्र भवन परिसर में दस दिवसीय राष्ट्रीय मृदा शिल्प कार्यशाला पर व्याख्यान किया गया। जिसमें टेराकोटा शिल्प के 20 प्रख्यात कलाकारों की शिल्प शैली, विशेषताओं व विचारों का भी उल्लेख करती है।

इस मृण्मय पौष कार्यशाला में कलाकारों ने अपनी पहचान और विषय के अनुरूप उत्कृष्ट शिल्प का निर्माण किया। मृण्मय कला को नये आयाम प्रदान किये। इन्हीं कलाकारों में दीपाली के अमूर्त शिल्प की तह में अतीत की परम्पराओं का संधान है जो सिन्धु घाटी की खुदाई में मिली माटी की मुहरों से आज तक जारी

है। विश्व में अनन्त आकार है कलाकार उनमें से किन्हें चुनता है यह उसकी मानसिकता पर निर्भर है ऐसा दीपाली का मत है।

'माटी कहे कुम्हार से तू क्यों रूंधे मोय' कबीर ने भले ही भिन्न अर्थों में रचा हो पर सच तो यही है कि बिना जतनों से रूंधी मिट्टी से शिल्प आकार नही ले सकता है।

आचार्य, डॉ0 राजेश्वर, 2000 ने अपने शोध पत्र ***"टेराकोटा और पूर्वांचल"*** में पूर्वांचल के टेराकोटा कला की बाते करते है। उन्होनें विशेषकर गोरखपुर की टेराकोटा कला का अध्ययन किया है। इस कला की साज–सज्जा के विभिन्न रूपों को दर्शाने का प्रयास करते है।

अपनी परम्परागत निर्मिति से यह प्रमाणित है कि ''ग्राम परम्पराओं की मृण्मय कला से मानवीय कला चेतना की चिन्मयवृत्ति, मृण्मय को कैसे हिरण्यमय करती है। इसे सिद्ध करती है पूर्वांचल की टेराकोटा रचना प्रक्रिया।''

घोड़ा मय सवार तथा हौदे के साथ हाथी और अन्य मानवीय आकृतियाँ इस प्रकार अभिव्यक्त है, जिनसे उनकी ग्राम्य गृणक्ता प्रमाणित होती है। टेराकोटा के अन्तर्गत किए गये निर्माण सामाजिक, धार्मिक तथा मार्मिक सभी आवश्वयकताओं की पूर्ति करने में सक्षम रहे है। वर्तमान में इन कलाओं नें विविधता के स्वरूप देखने को मिलते है। जिसका समय के साथ संरक्षण और अध्ययन करना आवश्यक है।

प्रवीन, योगेश, 2000 ने अपने शोध पत्र ***"लखनऊ का टेराकोटा शिल्प"*** में लखनऊ के टेराकोटा का गहनता के साथ अध्ययन करते है। उन्होनें लखनऊ के टेराकोटा कलाकृति, बर्तन, खिलौने, मिट्टी की लखौड़ियाँ, अस्तरकारी, पाइपिंग व गजकारी की सौन्दर्यात्मकता और कलात्मकता का सुन्दर वर्णन करते है।

वह कहते है कि मिट्टी ही संस्कृति का प्रतीक बन कर जागती है, सोती है। जब मिट्टी की बात आती है तो ये कहना पड़ता है कि लखनऊ नगर तो मिट्टी का ही शाहाकार है। मिट्टी के बने कलाकृतियाँ ही लखनऊ की पहचान है। इस विविध स्वरूप के निर्माण में विशिष्ट मिट्टी, रचनात्मकता, सधें हुए तापक्रम पर उनकी सेकाई तथा चमकदार रंगों की बड़ी भूमिका है। सारे संसार को देने वाले इन बारीक खिलौने और हूबहू नमूनों की कला के पीछे सैकड़ों वर्ष की परम्परा है।

प्लास्टिक के खिलौने के प्रचलन से इनकी कला क्षीण हुई है और लोगों के अभिरूचि का पतन भी हुआ है। इसलिए टेराकोटा शिल्प को बरकरार रखने का दायित्व हम सभी पर है। लखनऊ की शिल्पकला अन्य जगहों के शिल्पकला से कैसे भिन्न है। उनमें क्या सामान्यतायें दिखाई देती है। जिसका अध्ययन किया जा सकता है। तब ही इस शिल्पकला का संरक्षण संभव हो सकेगा।

खन्ना, एन0 अपने लेख ***"लोक कला वीथिका"*** में लोक कला के सन्दर्भ में व्याख्या करते है। लोक कला के इतिहास को बताते हुए इन्होनें उत्तर प्रदेश के विभिन्न जिलो के लोक कला का वर्णन करते है। इसके उत्थान के विषय में विचार करते है। लोक कला के संरक्षण और संग्रह के लिए लोक कला वीथिका के प्रबन्धन और संग्रह की चर्चा करते है। जिससे प्रदेश के विभिन्न लोक कथाओं तथा आदिम जनजातियों के विभिन्न लोक संस्कारों को जिनके स्वरूप कलात्मक है उनको प्रतीक दृष्टान्त के रूप में सुरक्षित रखा जाये। विभिन्न प्रकार के लोक कला के साथ टेराकोटा का भी वर्णन करते है।

टेराकोटा लोक कला का वर्णन करते हुए लिखे है कि मिट्टी की मूर्तियों की आकृतियाँ एवं शैली तीन प्रकार की है। एक वो जिनमें चिकनी पक्की मिट्टी का प्रयोग हुआ है। इनमें गोरखपुर के ग्राम रक्षक के प्रतीक में बनने वाले हाथी पर सवार देवी, घोड़ा जिसे ग्राम रक्षक की सवारी माना जाता है आदि दिखते है। दूसरे वे मूर्तियाँ, जिनमें आकृतियाँ और माध्यम दोनों खुरदे हुए है जैसे उरई की महालक्ष्मी का हाथी। तीसरी शैली के अन्तर्गत कलश–झार व वाराणसी के कुछ देवी–देवता आते है। जिनका निर्माण मिट्टी से करके इनमें रंग (लाल, हरे व नीले) का प्रयोग किया जाता है। मिली जुली शैलियों में प्रायः चिपकवा अर्थात् मूर्तियों को बनाकर ऊपर से कुछ भाग के आलेखनों को चिपकाने वाली पद्धति से किया जाता है।

इनके लेख यह दिशा प्रदान करती है कि लोक कला जन मानव और आदिम जनजातियों की कला है। जिसमें हमें विभिन्न प्रकार की विविधता दिखाई देती है। इनके कलाकारों की उंगलियाँ भले ही, आज के सन्दर्भ में परिपक्व न हो लेकिन इनकी कृतियाँ संग्रह और इतिहास की धरोहर है जिन्हें सुरक्षित रखना होगा।

काला, सतीश चन्द्र अपने *''बौद्ध कला– चूर्णलेप तथा टेराकोटा के माध्यम से''* में बौद्ध धर्म के कला के विषय में वर्णन करते है। इनमें मौर्य, शुंग तथा प्राक् मौर्य आदि कालों में बने देवी–देवताओं के बने मूर्तियों, यक्ष–यक्षियों तथा अलंकरण का वर्णन करते है। भरहुत, गन्धार तथा हड्डा आदि स्थानों पर बने चूर्णलेप और टेराकोटा कलाकृतियाँ का उल्लेख है। टेराकोटा और चूर्णलेप (स्टेको, गच) के माध्यमों की बात होती है। जिससे बौद्ध धर्म के चूर्णलेप और टेराकोटा का अध्ययन होता है।

इससे ज्ञात होता है कि विभिन्न कालों में बने बुद्ध तथा अन्य मूर्तियाँ सिर्फ पत्थर के न बन कर चूर्णलेप और टेराकोटा के माध्यम से भी निर्माण हुआ जो भारतीय कला के धरोहर है। इस धरोहर के ज्ञान व विकास के लिए इनका अध्ययन करना चाहिए और संरक्षण प्रदान करना चाहिए। जिससे आगे भी इसका ज्ञान सभी प्राप्त कर सकें।

अन्यः–

डॉ. नीरू, 2010, *शिल्पों में लखनवी सुगन्ध : सैयद अफसर मदद नकवी का*, लखनऊ : समकालीन कला का विकास, कला दीर्घा, अकं–21, लखनऊ।

मिश्र, डॉ. अवधेश, 2010, *भारतीय समकालीन और लखनऊ के कलाकार*, लखनऊ : समकालीन कला की आधारभूत प्रवृत्तियाँ, कला दीर्घा, अंक–10, लखनऊ।

शुक्ल, प्रयाग, 2009, *कला की दुनिया में जो देखा और जाना*, समकालीन कला, अंक–38–39, ललित कला अकादमी, नई दिल्ली।

ठाकुर, हीरो, 2007, *सिंधु घाटी सभ्यता की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि*, संस्कृति, संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।

भारद्वाज, विनोद, 2004–2005, *हिम्मतशाह : कला का जोखिम*, समकालीन कला, अंक–25, ललित कला अकादमी, नई दिल्ली।

रंजन, घनश्याम, 1988, *88 का दक्षेस महोत्सव 'चाक पर गढ़े रूप'*, समकालीन, कला अंक–9–10, ललित कला अकादमी, नई दिल्ली।

सरस, लक्ष्मीकान्त, 1988, *प्राचीनता से समकालीनता तक 'तमिलनाडु की कला–धारा'*, समकालीन कला अंक–9–10, ललित कला अकादमी, नई दिल्ली।

उद्देश्य

टेराकोटा मूर्तिशिल्प की अपनी विशिष्ट पहचान है, जो आदि काल से कालक्रमानुसार सृजनशील रही है। टेराकोटा मूर्तिकला बौद्ध काल में अपने चरमोंत्कर्ष पर थी। आदिकाल से वर्तमान तक मूर्ति शिल्पियों के सानिध्य में टेराकोटा मूर्तिशिल्प अत्यधिक विकास हुए जो इस कला को सुदृढ़ करते हुए इसके महत्व को प्रदर्शित करते हैं जिसमें इन मूर्ति शिल्पियों के समकालीन मूर्तिशिल्प के भी कलात्मक विशेषताएं विद्यमान है। अब तक लोगों के ज्ञान से दूर समकालीन टेराकोटा मूर्ति शिल्पियों को संसार के समक्ष प्रत्यक्ष रखने हेतु, प्रस्तुत शोध कार्य के विषय **''टेराकोटा में कार्य करने वाले समकालीन मूर्ति शिल्पियों का समीक्षात्मक अध्ययन''** के सम्बन्ध में शोधकार्य के उद्देश्य निम्न है–

- भारत वर्ष के टेराकोटा कला की उत्पत्ति, विकास एवं उसके भौगोलिक क्षेत्र विस्तार का अध्ययन।
- समकालीन टेराकोटा मूर्तिशिल्प कला का अध्ययन।
- समकालीन टेराकोटा मूर्ति शिल्पियों का अध्ययन।
- समकालीन टेराकोटा मूर्ति शिल्पियों के विषयवस्तु का अध्ययन।
- समकालीन टेराकोटा मूर्ति शिल्पियों के रचनात्मक शैली का अध्ययन।
- समकालीन टेराकोटा मूर्ति शिल्पियों का तुलनात्मक अध्ययन।
- भारतीय कला में समकालीन टेराकोटा मूर्ति शिल्पियों के महत्व व योगदान का अध्ययन।
- समकालीन टेराकोटा मूर्ति शिल्पियों के कला का समाज व संस्कृति पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन।
- समकालीन टेराकोटा मूर्ति शिल्पियों की वर्तमान अवस्था और विकास का अध्ययन।

- समकालीन टेराकोटा मूर्ति शिल्पियों के विकासक्रम में राज्य सरकार एवं केन्द्र सरकार द्वारा किये जाने वाले प्रयास का अध्ययन।

परिकल्पना

मूर्ति शिल्पियों द्वारा सामाजिक विषय पर आधारित मूर्तिशिल्प, कलात्मक वस्तुएं तथा अलंकृत आकृतियों के विषय में जानने का प्रयास अपने आप में अत्यन्त उत्साह वर्धक है। चाक के आरम्भ से ही मृण्मय कला के सृजन की विकास गाथा को जानना आरम्भ हो गया। मानव ने अपने वस्तुओं को संग्रहीत करने के लिए पात्रों का निर्माण प्रारम्भ कर दिया था। जो अवशेष रूप में आज भी देखने को मिलते है।

उत्तरोत्तर विकास होने के साथ बौद्ध काल टेराकोटा कला का स्वर्णयुग रहा किन्तु धीरे–धीरे इस कला का विकास सीमित होता चला गया। वर्तमान में पुनः एक बार समकालीन टेराकोटा मूर्ति शिल्पियों के प्रयास से मूर्तिशिल्प देखने को मिलती है। ये सभी मृण्मय कला के रूप जो उपयोगी, सजावटी व विविध विषयों के मूर्तिशिल्प बहुतायत से वर्तमान सभ्य समाज में प्रचलन एवं फैशन का प्रतीक बने हुये है, जिसमें मिट्टी और रंग के द्वारा मूर्तिशिल्प तैयार की जाती है। इनकी सौन्दर्यता और कलात्मकता उच्चकोटि की मिलती है। टेराकोटा कलाकृतियों को देखकर चित्त प्रफुल्लित हो उठती है। टेराकोटा कला हमें प्रेरणा भी देती है कि साधारण सी मिट्टी होते हुए भी अपनी सौन्दर्यता और कलात्मकता से सबकों आकर्षित करती है।

समकालीन मूर्ति शिल्पियों के टेराकोटा कला के सौन्दर्यत्मकता और कलात्मकता से मैं भी प्रभावित हुआ। इसके अवलोकन हेतु मैंने समकालीन टेराकोटा मूर्ति शिल्पियों के विषय में अध्ययन किया व उनके मूर्तिशिल्पों का भी अवलोकन किया। इनकी सौन्दर्यात्मकता, आकारों की विविधता एवं कलात्मकता और अलंकरणों के स्वरूपों ने मुझे अपनी ओर आकर्षित किया। अतः इस विषय को मैंने शोधकार्य का विषय बनाया। शोधकर्ता **''टेराकोटा में कार्य करने वाले समकालीन मूर्ति शिल्पियों का समीक्षात्मक अध्ययन''** चयनित समकालीन मूर्ति शिल्पियों व उनके टेराकोटा मूर्तिशिल्प के विशिष्टता को सबके समक्ष प्रस्तुत करने का प्रयास करेगा।

शोध पद्धति

प्रस्तुत विषय में टेराकोटा के समकालीन मूर्ति शिल्पियों का समीक्षात्मक अध्ययन किया जायेगा। जिसके लिए इस अध्ययन में वर्णनात्मक शोध पद्धति का प्रयोग करेगें।

यह शोध पद्धति इस शोधकार्य के लिए उपयुक्त है जिसके द्वारा शोधकार्य का वर्णन व विश्लेषण कर अध्ययन किया जायेगा। शोधकार्य के लिए शोध पद्धति में विभिन्न उपकरणों का भी प्रयोग करेगें। जिससे हमारे शोधकार्य के उद्देश्य पूर्ण हो। जैसे –

- वर्णनात्मक शोध पद्धति
    - सर्वेक्षण अनुसन्धान
    - विकासात्मक अध्ययन
- ऐतिहासिक अनुसन्धान/अध्ययन

शोधकार्य के लिए शोध पद्धति में विभिन्न उपकरणों का प्रयोग करेगें।

- अवलोकन
- साक्षात्कार
- प्रश्नावली

शोधकार्य हेतु आंकड़ों का संकलन

शोधकार्य को पूर्ण करने के लिए आंकड़ों का संकलन के माध्यम निम्न है–

प्राथमिक स्रोत

- समकालीन टेराकोटा मूर्ति शिल्पियों का सर्वेक्षण।
- मूर्ति शिल्पियों के कार्य का अवलोकन।
- कलाकारों के साक्षात्कार द्वारा।
- व्यक्तिगत संकलन (स्थानीय प्रतिवेदनों द्वारा)।
- मूल व प्रमाणिक ग्रन्थों के अध्ययन द्वारा।

द्वितीयक स्रोत

- स्थानीय सूचनाओं के द्वारा।
- पुस्तकों – 1. अनुवादित पुस्तकें
  2. वार्षिकी पुस्तकें

• पत्र–पत्रिकाएं
• समाचार पत्र
• शोध ग्रन्थ
• शोध पत्र व लेख
• इन्टरनेट / वेबसाइट
• सरकारी / गैर सरकारी आँकड़ों द्वारा।
• संस्थागत द्वारा।

अध्ययन का क्षेत्र एवं महत्व

समकालीन टेराकोटा मूर्ति शिल्पियों के अध्ययन का क्षेत्र व महत्व व्यापक तथा बहुआयामी है। प्रस्तुत विषयानुसार यह दर्शाने का प्रयन्त किया गया है कि विभिन्न कालों के विकासक्रम में टेराकोटा (मृण्मय) मूर्तिशिल्प प्राचीन काल से समकालीन मूर्ति शिल्पियों के सानिध्य में उत्कृष्ट रूप में सृजनशील रही है। अनेक कालक्रम में इसे समाज की अवहेलना भी झेलनी पड़ी फिर भी यह कला जीवन्त रही। वर्तमान में आधुनिकता के प्रभाव और टेराकोटा मूर्ति शिल्पियों के अथक प्रयास से यह कला पल्लवित और पोषित हो रही है। इसलिए इन मूर्ति शिल्पियों के महत्वा को प्रकट करना आवश्यक है। इस अध्ययन से इस कला की महत्व बढ़ जाता है। इनके क्षेत्रों व महत्व के द्वारा ज्ञान प्राप्त कर कला विद्यार्थी की नहीं वरन् पूरा समाज लाभन्वित हो और अपने ज्ञान भण्डार में वृद्धि कर सकें। इसके अध्ययन के क्षेत्र और महत्व निम्न है–

- प्राचीन टेराकोटा मूर्तिशिल्प के क्रमबद्ध प्रारूप को समझने का प्रयास।
- समकालीन टेराकोटा मूर्ति शिल्पियों का अध्ययन।
- मूर्ति शिल्पियों के विषयगत रूपों का अध्ययन।
- समकालीन टेराकोटा मूर्ति शिल्पियों के शैलीगत अध्ययन।
- समकालीन टेराकोटा मूर्ति शिल्पियों का तुलनात्मक अध्ययन।
- समकालीन टेराकोटा मूर्ति शिल्पियों के महत्व व योगदान को समझना।
- समकालीन टेराकोटा मूर्ति शिल्पियों के सामाजिक और व्यवसायिक समन्वय का अध्ययन।
- वर्तमान में भारतीय समकालीन टेराकोटा मूर्ति शिल्पियों के विकास की नई दिशा व गति के महत्व को समझना।

टेराकोटा में कार्य करने वाले समकालीन मूर्ति शिल्पियों का समीक्षात्मक अध्ययन

अनुक्रमणिका

- प्रस्तावना

प्रथम अध्याय – भारत वर्ष के टेराकोटा कला की पृष्ठभूमि

द्वितीय अध्याय – प्रमुख रूप से चयनित समकालीन टेराकोटा कला के मूर्ति शिल्पी

तृतीय अध्याय – समकालीन टेराकोटा कला के मूर्ति शिल्पियों के विषय

चतुर्थ अध्याय – समकालीन टेराकोटा कला के मूर्ति शिल्पियों के शैलीगत स्वरूप

पंचम अध्याय – समकालीन टेराकोटा कला के मूर्ति शिल्पियों के शिल्पों का समीक्षात्मक अध्ययन

षष्ठ अध्याय – समकालीन टेराकोटा मूर्ति शिल्पियों का कला के क्षेत्र में महत्व एवं योगदान

- उपसंहार
- चित्र सूची
- **REFERENCE**
- **BIBLIOGRAPHY**

REFERENCES

1. त्रिपाठी, अनुराधा, गोरखपुर एवं वाराणसी के मृण्मय कला में निहित अंलकारिक पक्ष का तुलनात्मक अध्ययन, दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर, पेज नं0– **IV, 2012**.
2. उपकार प्रकाशन, भारतीय कला एवं संस्कृति, विशेषांक, प्रतियोगिता दर्पण, सीरीज–**5**, पेज नं0– 9, **2013**.
3. त्रिपाठी, अनुराधा, गोरखपुर एवं वाराणसी के मृण्मय कला में निहित अंलकारिक पक्ष का तुलनात्मक अध्ययन, दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर, पेज नं0– **IV**, **2012**.
4. नकवी, हेना, अनूठा पारंपरिक हस्तशिल्प टेराकोटा, कुरूक्षेत्र, सूचना एवं जनसम्पर्क मंत्रालय, अंक–**12** पेज नं0– 56, **2015**.

BIBLIOGRAPHY

पुस्तकें

1. अग्रवाल, वासुदेव शरण – भारतीय कला, पृथ्वी प्रकाशन, वाराणसी, 2006.
2. अग्रवाल, पृथ्वी कुमार – प्राचीन भारतीय कला एवं वास्तु कला, प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्व, हिन्दी विश्वविद्यालय प्रकाशन.
3. अग्रवाल, आर0 ए0 – भारतीय चित्रकला का विवेचना (कला विलास), इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाऊस प्रकाशन, मेरठ, 2005.
4. अग्रवाल, अशोक गिर्राज किशोर – कला समीक्षा, 1970.
5. आचार्य, प्रसन्न कुमार – भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता.
6. उपाध्याय, भगवत शरण – भारतीय कला की भूमिका, पीपुल्स पब्लिशिंग हाऊस प्रकाशन, नई दिल्ली, 1980.
7. उपाध्याय, भगवत शरण – भारतीय कला का इतिहास, पीपुल्स पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, 1989.
8. उपाध्याय, भगवत शरण – भारतीय कला का इतिहास, 1981.
9. कोरोब्किन, फ्योदोर – प्राचीन विश्व का इतिहास का परिचय, 1986.
10. गर्ग, प्रेम प्रकाश – मिट्टी व कुट्टी का काम, विद्या भवन सोसायटी, राजस्थान, 1956.
11. गॉर्डन, डी0 एच0 – भारतीय संस्कृति की प्रागैतिहासिक पृष्ठभूमि, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना, बिहार, 1970.
12. गोस्वामी, प्रेमचन्द्र – भारतीय कला के विविध स्वरूप, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 1997.

13. चतुर्वेदी, ममता – पाश्चात्य कला, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2002.
14. चतुर्वेदी, गोपाल मधुकर – भारतीय चित्रकला, साहित्य संगम, इलाहाबाद, 1989.
15. जोशी, महेश चन्द्र – युग–युगीन भारतीय कला, 1995.
16. ठाकुर, अवनीन्द्र नाथ – भारत शिल्प के षंडाग, नया प्रकाशन, इलाहाबाद, 1958.
17. दास, कुसुम – भारतीय कला परिचय, उत्तर प्रदेश ग्रन्थ अकादमी, लखनऊ, 1977.
18. प्रताप, रीता – भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2012.
19. पाण्डेय, सुशील कुमार – प्राचीन मृण्मयी मूर्तिकला, संजय बुक सेन्टर, वाराणसी, 1997.
20. बोस, हीरेन्द्रनाथ – मृत्तिका उद्योग, भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी, 1958.
21. बन्ध्योपाध्याय, ए0 के0 – मन्दिर टेराकोटा साहअ (बंगला), 1971.
22. भारद्वाज, विनोद – वृहद आधुनिक कला कोश, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2006.
23. भटनागर, महेश – सामाजिक विज्ञान, राजलक्ष्मी पब्लिकेशन, मेरठ, 2010.
24. राय, गोविन्द चन्द – प्राचीन भारतीय मिट्टी के बर्तन, चौखम्भा विद्या भवन, 1997.
25. विश्वकर्मा, प्रेमचन्द्र – लघु मृण्मूर्तिकला, कला प्रकाशन, वाराणसी, 2006.
26. शर्मा, देव प्रकाश – भारतीय एवं सिन्धु सभ्यता, शारदा पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली.
27. सिंह, राजेन्द्र – विश्व की प्राचीन सभ्यताएँ, पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, 2003.
28. स्वामीनाथन, जे0 – कला समय समाज, प्रयाग, 1979.

29. श्रीवास्तव, के0 सी0 – प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति, यूनाइटेड बुक डिपो, इलाहाबाद, 2015.
30. श्रीवास्तव, बृज भूषण – प्राचीन भारतीय प्रतिमा विज्ञान एवं मूर्तिकला, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 1990.

31. Ankit , Jacqui – Techniques and Trade secrets for potter The Indispensatable Compendium of essential Knowledge and Troubleshooting, 2009
32. Biswas, S.S. – Terracotta Art of Bengal, 1980.
33. Britt, John – The Complete Guide to mid- Range Glazes, Glazing and Firing at cones, 2014.
34. Chattopadhayaya, Kamaladevi – Indian Handicrafts, Allied Publishers Private ltd., New Delhi, 1963.
35. Dasgupta, G.C. – Bibliography of Ancient Indian Terracotta of figurines, vol. iv, 1938.
36. Dasgupta, P. – Temple Terracotta of Bengal, 1980.
37. Dey, Mukul, Mccutchion, David – Birbhum Terracotta, 1959.
38. Dhavalikar, A.K. – Master Pics of Indian Terracotta.
39. Franz, Linda – Basic pottery making, 2009.
40. Gangoly, O.C. & Goswami, A. – Indian Terracotta Art, Calcutta, 1959.
41. Ganguly, O.C. – Indian Art and Heritage, Oxford Book and Stationary Co., Calcutta, 1957.

42. Gupta, Keshav Chandra – Progress and prospects of pottery industry in india, Pottery industry.
43. Hatch, Molly – New Ceramic surface design: Learn to Stamp, Stencil, Draw and Print on clay.

44. Kala, S.C. – Terracotta in Allahabad Museum, 1980.

45. Kosambi, D.D. – The Culture and Civilization of Ancient India, 1988.

46. Kramrich, ST. – Indian Terracotta, 1939.

47. Manchanda, O. – A Study of the Harppan pottery, Oriental Publishing, Delhi.

48. Martin, Andrew – The Essential guide to mold making and shilp casting, 2007.

49. Mills, Maureen – Surface design for Ceramic, 2011.

50. Minstry of Information and Brodcasting – Indian Handicraft, Government of India, 1953

51. Orton, Clive – Pottery in Archaeology, Published by Cambridge University Press, 1993.

52. Roy, Sudhansu Kumar – The Folk Art of India, Calcutta, 1967.

53. Safer, Thomas – Pottery Decoration, Watson guptill Publication, New York & Pitman Publcation, London.

54. Sankarnada – History of Mohan-Jo-Daro and Harppan.

55. Satyawati, Sudha D.K. – History of pottery of Indus vally Civilization, Print New Delhi.

56. Sharma, D.P. – Harppan Art, Sharda Publishing House, Delhi, 2007.

57. Subramanium, K.G. – Advance History of India, New York, 1967.

शोधग्रन्थ

1. त्रिपाठी, अनुराधा – ''गोरखपुर एवं वाराणसी के मृण्मय कला में निहित अलंकारिक पक्ष का तुलनात्मक अध्ययन'', दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर, 2012.

2. रतन – ''पॉटरी एवं सेरेमिक कला की सांस्कृतिमूलक भूमिका एक समीक्षात्मक अध्ययन (उत्तर प्रदेश के विशेष सन्दर्भ में)'', महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी, 2007–08.

3. वर्मा, विमल – ''मथुरा संग्रहालय में संग्रहीत मृण्मय मूर्तिकला का विश्लेषणात्मक अध्ययन'', दयालबाग शिक्षण संस्थान (डीम्ड विश्वविद्यालय), दयालबाग, आगरा, 2003.

4. सिंह, ज्योत्सना – ''अलीगढ़ की लोककला एक समीक्षात्मक अध्ययन'', डॉ0 भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा, 2002.

5. शर्मा, वन्दना – प0 बंगाल के मृण्मय मन्दिर (वीरभूम, बाकुड़ाँ)'', दयालबाग शिक्षण संस्थान (डीम्ड विश्वविद्यालय), दयालबाग, आगरा, 1996.

लघुशोध

1. धन प्रजापति, विजय कुमार – ''औरंगाबाद की पारम्परिक शिल्पकला'' दयालबाग शिक्षण संस्थान (डीम्ड विश्वविद्यालय), दयालबाग, आगरा, 2014.

पत्र–पत्रिकायें

1. नकवी, हेना – ''अनूठा पारम्परिक हस्तशिल्प टेराकोटा'', कुरूक्षेत्र, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली, 2015.

2. मिश्र, डॉ0 हेमलता – ''मृण्मय पौष (माटी का अभिनव संसार)'', कला दीर्घा, लखनऊ, अप्रैल 2011.

3. आचार्य, डॉ0 राजेश्वर – ''टेराकोटा और पूर्वांचल'', कला त्रैमासिक पत्रिका, राज्य ललित कला अकादमी, उत्तर प्रदेश, जुलाई–सितम्बर 2000.

4. प्रवीन, योगेश – ''लखनऊ का टेराकोटा शिल्प'' कला त्रैमासिक, राज्य ललित कला अकादमी, उत्तर प्रदेश, जुलाई–सितम्बर 2000.

5. खन्ना, एन0 – ''लोक कला वीथिका'', कला त्रैमासिक, सांस्कृतिक महोत्सव विशेषांक, राज्य ललित कला अकादमी, उत्तर प्रदेश.

6. काला, सतीश चन्द्र – ''बौद्ध कला– चूर्णलेप तथा टेराकोटा के माध्यम से'', कला त्रैमासिक, राज्य ललित कला अकादमी, उत्तर प्रदेश.

7. डॉ. नीरू – शिल्पों में लखनवी सुगन्ध : सैयद अफसर मदद नकवी का, लखनऊ : समकालीन कला का विकास, कला दीर्घा, अकं–21, लखनऊ, 2010.

8. मिश्र, डॉ. अवधेश – भारतीय समकालीन और लखनऊ के कलाकार, लखनऊ : समकालीन कला की आधारभूत प्रवृत्तियाँ, कला दीर्घा, अंक–10, लखनऊ, 2010.

9. शुक्ल, प्रयाग – कला की दुनिया में जो देखा और जाना, समकालीन कला, अंक–38–39, ललित कला अकादमी, नई दिल्ली, 2009.

10. ठाकुर, हीरो – सिंधु घाटी सभ्यता की सांस्कृतिक पृष्टभूमि, संस्कृति, संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 2007.

11. भारद्वाज, विनोद – हिम्मतशाह : कला का जोखिम, समकालीन कला, अंक–25, ललित कला अकादमी, नई दिल्ली, 2004–2005.

12. रंजन, घनश्याम – 88 का दक्षेस महोत्सव 'चाक पर गढ़े रूप', समकालीन, कला अंक–9–10, ललित कला अकादमी, नई दिल्ली, 1988.

13. सरस, लक्ष्मीकान्त – प्राचीनता से समकालीनता तक 'तमिलनाडु की कला–धारा', समकालीन कला अंक–9–10, ललित कला अकादमी, नई दिल्ली, 1988.
14. शोधनिधि, इन्दौर, मध्यप्रदेश.
15. आर्षभी, कला के विविध आयाम, राष्ट्रीय सम्मेलन, गोरखपुर.
16. कला सरोवर
17. कला दर्शन
18. पुराकला
19. कला निधि
20. रूपरेखा
21. संस्कृति
22. कला संवाद, ललित कला अकादमी, नई दिल्ली.
23. आकृति, मासिक पत्रिका, राज्य ललित कला अकादमी, जयपुर.
24. Art India
25. Art History
26. Artist
27. Art New (Monthly), All India Fine Art & Craft, New Delhi.

Journal of the Indian Society of the Oriental Art

1. Jiosa - Indian Terracotta, vol. vii, 1938

Publication of Archaeological Survey of India, Calcutta, Delhi & Other

1. Mackay, E. - Further Excavation at Mohan-Jo-Daro, 1937-38.
2. Agrawal, V.S. - Terracotta figurines of Arhichhatra District Bareilly, Ancien India, No. 4, 1947-48.
3. Deshpande, M.N. - Roman Influence on the Terracotta of the Satavahan Period, Summaries of Paper, New Delhi, 1961.

Websites

- www.matikalaboard.com
- www.facenfacts.com
- www.kalacafe.worldpress.com
- www.lakesidepottery.com
- www.indianmart.com
- www.clay.king.com
- www.craftandartisans.com
- www.ancient.eu
- www.terracottagorakhpur.org
- www.inextlive.com
- www.paramparikkariger.com

समाचार पत्र

हिन्दुस्तान – देशभर में डिजाइनर दीए भेज रहा टेराकोटा विलेज, अजय कुमार सिंह, गोरखपुर, 02.11.2015.

औरंगाबाद की शिल्पकला पर पर्यटन विभाग की नजर, गोरखपुर.

अन्तर्राष्ट्रीय फलक पर दिखेगी औरंगाबाद की टेराकोटा, गोरखपुर, 02.06.2017

आई नेक्स्ट – टेराकोटा को नई पहचान दिलाएगा महोत्सव, गोरखपुर, 06.01.2016.

टेराकोटा शिल्प का बस नाम ही काफी है गोरखपुर, 23.12.2015.

दैनिक जागरण – औरंगाबाद, यहां जीवन्त कृतियों में बदलती है माटी, चौधरी अशोक, गोरखपुर, 17.02.2008.

घर सजाने की टेराकोटा कला, तिवारी, राहुल, 04.11.2000.

दैनिक जागरण – हृदय को स्पंदित करती कला, सिंह सत्येन्द्र कुमार, गोरखपुर,
(गुरूवारीय जागरण) 29.01.2008.

अनुपम और अद्भुत भारतीय कला, ऋचा, डॉ0 अग्रवाल, गोरखपुर, 27.12.2007.

स्वयं में पूर्ण भारतीय संस्कृति, बुढ़लाकोटी, कुसुम, गोरखपुर, 29.12.2002.

अमर उजाला – टेराकोटा के नायाब रंग, नीलाक्षी, 08.06.2000.

Indian Express - Terracotta Turns Out to be Eye Catchers, Ahuja, Charanjit, Delhi, 31.12.1993.

टेराकोटा में कार्य करने वाले समकालीन मूर्ति शिल्पियों का समीक्षात्मक अध्ययन

जितेन्द्र कुमार चौधरी

चित्रकला

ललित कला विभाग,

आगरा कॉलेज, आगरा

(रजि0नं.– 354/2017 5744)

डॉ0 इन्दु जोशी

अध्यक्ष,

हस्ताक्षर .....

ललित कला विभाग,

आगरा कॉलेज, आगरा।

आगरा – 282004

फोन नं. – 9412810061

ई–मेल – drindujoshi@gmail.com

पृष्ठ संख्या –

ई.मेल – jitendrakumarchaudhari1988@gmail.com

फोन नं. 9838038121

पता : म0नं0 26, ग्राम तालिवाबाद, पोस्ट नैयापार खुर्द,

जिला गोरखपुर – 273152 (उ0प्र0)